International Journal of Applied Research 2016; 2(12): 45-48

ISSN Print: 2394-7500
ISSN Online: 2394-5869
Impact Factor: 5.2
IJAR 2016; 2(12): 45-48
www.allresearchjournal.com
Received: 10-10-2016
Accepted: 11-11-2016

डॉ. उत्तम पटेल
एसोसिएट प्रोफेसर एवम् अध्यक्ष, हिंदी विभाग, श्री वनराज आर्ट्स एण्ड कॉमर्स कॉलेज, धरमपुर, जिला. वलसाड–369050 (गुजरात)

Correspondence
डॉ. उत्तम पटेल
एसोसिएट प्रोफेसर एवम् अध्यक्ष, हिंदी विभाग, श्री वनराज आर्ट्स एण्ड कॉमर्स कॉलेज, धरमपुर, जिला. वलसाड–369050 (गुजरात)

जंगल के दावेदार' का नायक बीरसा मुण्डा

डॉ. उत्तम पटेल

सारांश
आदिवासी जीवन पर रचे गए भारतीय उपन्यासों में 'बलि–विभावरी'–शिरसकर (मराठी), 'कुडियर कुसु'–कारंत (कन्नड़), 'अमृत संतान'–गोपीनाथ महंती (उड़िया), 'मधुओर'–शिवशंकर पिल्लै (मलयालम), 'कब तक पुकारूँ'–रांगेय राघव, 'मैला आँचल'–रेणु,, 'सिद्धू कान्हू, 'चोट्टी मुंडा का तीर', 'हजार चौरासी की माँ'–महाश्वेता देवी (बंगाली), 'अरण्यवह्नि'–ताराशंकर बंधोपाध्याय (बंगाली), 'आरण्यक'–विभूति भूषण बंधोपाध्याय (बंगाली), 'गगन घटा घहरानी' (मनमोहन पाठक), 'सहराना' (पुन्नी सिंह), 'अल्मा कबूतरी' (मैत्रेयी पुष्पा), 'जंगल जहाँ शुरू होता है' (संजीव) आदि महत्वपूर्ण हैं। इनमें बंगाली लेखिका महाश्वेता देवी द्वारा रचित उपन्यास 'जंगल के दावेदार' एक माइल स्टोन मील का पत्थर सिद्ध हुआ है। इसमें चित्रित संथाल आदिवासी नेता बीरसा मुंडा ने अंग्रेजों के सामने अपने अधिकारों के लिए संघर्ष किया था। जिससे भयभीत हो अंग्रेजों ने इसे जहर देकर मार डाला था। बीरसा मर कर भी मुंडा में चेतना और अधिकार–बोध भरकर उन्हें अन्याय के विरुद्ध संघर्ष करना सिखा जाता है। इस बीरसा के प्रभाव से गुंडाधुर जैसे नेता हुए। तो बिहार, झारखंड, उड़ीसा, छत्तीसगढ और मध्यप्रदेश के पूर्वी–दक्षिण क्षेत्र के आदिवासी उसे अपने नायक के रूप में देखते हैं।

कूट शब्दः बीरसा, गरीबी, अन्याय, अत्याचार, विद्रोह

प्रस्तावना
'जंगल के दावेदार' बंगाली की प्रख्यात लेखिका महाश्वेता देवी के मूल बंगाली में रचित "अरण्येर अधिकार" का हिंदी रूपांतर है। जिसे 1979 में साहित्य अकादमी पुरस्कार प्राप्त हुआ था। इस उपन्यास में बीरसा मुण्डा का चरित्र केन्द्र में है। कृतिवास मुखर्जी के शब्दों में कहें तो– "Based on the life of tribal freedom fighter Birsha Munda."[1] इस उपन्यास की आधार सामग्री डॉ. कुमार सुरेशसिंह की 'Dust, storm and hanging mist' पुस्तक है।

बीरसा के वंश के आदि पुरूषों ने छोटा नागपुर की नींव डाली थी। उसके बाप का नाम था–सुगाना और माँ का नाम था करमी। उनकी संतान थीं – तीन लड़के– कोम्ता, बीरसा, कनू और दो लड़कियाँ। गरीबी के कारण कभी किरस्तान हुए, फिर मुंडा बन गये। विष्युत वार को पैदा हुआ था इसलिए नाम हुआ –बीरसा । उसकी माँ उसके जन्म के बारे में कहती है– "तेरे जन्मने पर तीन गाँव के लोगों ने मेरे घर के आकाश पर तीन तारे जलते–बुझते देखे थे।"[2] बीरसा बचपन में काठ–पत्ते, फल–कंद–शहद लाया करता था। गरीबी के कारण घाटो में नमक न मिलने पर उसे तकलीफ होती थी। तब वह सोचता– "बड़े होने पर वह बाजार से एकदम एक बोरा नमक ले आयेगा। जिसकी जितनी तबियत हो उठाकर घाटो में मिलाकर खाना।"[3] असह्य गरीबी के कारण वह एकदम बड़ा बनना चाहता था। जंगल में बैठकर वह टुइला और बंशी बजाता। टुइले की रागिनी से वह नील पाखी को पकड़ता। बचपन ही से उसमें अधिकार–बोध जाग्रत था। धानी से वह यह कह चुका था कि "यह जंगल मेरा है।"[4]

बीरसा के अनोखे गुणों के कारण माँ करमी को वह – "पेट का लड़का। फिर भी अनचीन्हा–सा लगता है।"[5] सुगाना को भी लगता कि बीरसा ओर जात का लड़का जैसा है। वह करमी से कहता है –"वह मेरा बेटा है, लेकिन मैं उसे पहचान न पाया, तू भी नहीं पहचानती। मुंडाओं के घर ऐसे लड़के नहीं होते।" सुगाना के दादा ने भी कहा था– "तेरा यह बेटा बड़ा गजब का है रे। उसकी बाँसुरी सुनी, ऐसे सुर मैंने कभी नहीं सुने।"[6] बीरसा जैसे बेटे के कारण तो सबकी जबान पर था कि सुगाना को बेटा ऐसा क्यों हुआ ? यह जंगल का रहस्य कैसे जान जाता है ? कहाँ कंद, मछली, बेर, आँवले, खरगोश हैं? उसे कैसे पता चल जाता है ? नन्हा बीरसा मानूस के रक्त में मादल बजा सकता था। नन्हा बीरसा कभी किसी से नहीं डरता था। प्राईमरी की परीक्षा उसने दो ही वर्षों में पास कर दी थी। इसलिए पादरी रेवरेंड ने उसकी प्रतिभा को परख कहा था– "तुम्हारा भविष्य बहुत उज्जवल है।"[7]

चाईबासा पढ़ाई के लिए जाने की घटना के बारे में लेखिका लिखती हैं– "वह चला था एक जन्म, एक जीवन से एक दूसरे जीवन की ओर।"8 मिशन में पढ़ाई के समय अमूल्य बाबू से दोस्ती हुई थी। वह बीरसा को पढ़ाता था तब बीरसा भी उससे कहता था– पढ़ने के बाद तू भी दिकू हो जायेगा।

चाईबासा में धानी के साथ की बुढ़िया से उसकी मुलाकात हुई थी तब उसने बीरसा से कहा था– "मुलकी लड़ाई की खबर नहीं सुनी? तू कैसा मुंडा है रे ?"[9] तब बीरसा को बड़ा आश्चर्य हुआ था कि धानी और सरदार सुगाना मुंडा के सोलह साल के बेटे (बीरसा) को क्यों खोज रहे हैं ?

मुंडाओं ने डॉक्टर नॅट्रेट से कहा था कि काश्तकारी के कानून के अनुसार जिसकी जमीन है, वह रख सकेगा। हमारा पुराना गाँव हमें दे दो। किन्तु उसके मना करने पर वे बोरपा चले जाते हैं। बोरपा मिशन के लियेवेंस साहब ने मुण्डाओं से कहा था– "जो अत्याचारी है, उनसे जाकर लड़ो। लड़ने से वे झुक जायेंगे।"[10]

बैरिस्टर जैकब मुंडाओं की ओर से केस लड़ते थे। 1878 में उन्होंने सरकार को लिखकर कहा था–छोटा नागपुर की जमीन उनकी मिल्कियत है। उस प्रदेश पर उनका अधिकार उन्हें दिलाया जाए। अतः मुंडा जैकब पर भरोसा करते थे, मिशन पर उन्हें विश्वास नहीं था।

1887–88 में सरदारों और मिशन के बीच कुट्टी हो गई थी तब नॅट्रेट ने सरदारों को धोखेबाज कहा था। परिणाम बीरसा के मुंडारी रक्त में उबाल (विद्रोह) आ गया था। उस समय बीरसा, साहब से लड़ा था। अमूल्य ने माफी माँगने को कहा था किन्तु बीरसा ने अपनी जाति पर लगाये गये आरोप के कारण मिशन छोड दिया था, किन्तु माफी नहीं माँगी थी। और अपनी – कितनी ही बातें मन में उठती हैं। मैं कहाँ से आया? क्यों आया? कैसे आया? – की आत्मजिज्ञासा शांत करने वह बनगाँव आनंद पाँडे के पास पहुँच गया था जहाँ उसने जनेऊ पहना था, चंदन लगाया था। वहाँ बीरसा अशांत, चंचल, अस्थिर रहता है।

1878 में कानून बना था, जिसका अमल 1888 में किया जा रहा था कि "मुंडाओं से सारी जमीन–जंगल वापस ले लिए जाये।"[11] जिसे सुनकर बीरसा में चुटिया और नागु डोलने लगे थे। वह चीख उठा था– जंगल का अधिकार कृष्ण भारत का आदि अधिकार है। जंगल पर हमारा दावा है, अधिकार देना होगा। और वह चाइबासा जाकर सरकार को अर्जी देता है। वहाँ ऑफिस बाबूओं द्वारा तुच्छ तिरस्कारपूर्ण व्यवहार तथा अपने व अपने साथियों को "तू" बोलकर अपमानित करने का प्रतिवाद करते हुए वह कहता है –"तू तू क्यों कहते हो? मुंडा आदमी नहीं है? साहब को देखकर "आप" कहते हो? बनिया देखकर "तुम" कहते हो, मुंडा देखकर "तू" कहते हो?"[12]

बीरसा के अधिकार–बोध के कारण आनंद पाँडे ने उसे वहाँ से निकालते हुए कहा था– "तू सरकार के नाम अर्जी देता है, सरदारों की बातों में आता है, तुझे रखने से जमींदार गुस्सा हो जायेंगे।" तब बीरसा उससे कहता है कि "तुम्हारा नमक खाया है इसलिए तुम बच गये, नहीं तो पत्थर मारकर तुम्हें पीस डालता।"[13] बीरसा की ऐसी अधिकार–चेतना के कारण सरदारों की नजर उसकी ओर जाती है।

गरीबी के कारण बीरसा चाल्की की लाश निकाल कर अँगूठी और पैसे पाकर चावल लाता है किन्तु उसकी माँ को पता चलने पर वह सबकुछ फेंक देती है। जिससे बीरसा बहुत दुखी होता। तब वह वनदेवी से संवाद कर, उसकी पीड़ा सुनता है। और भगवान बनने का निर्णय करता है– "हाँ मैं भगवान बनूँगा, बीरसा भगवान। तब धरती का आबा बन जाऊँगा।"[14] "...सब मेरा है। यह सारा जंगल मेरा है। मैं धरती का आबा हूँ।"[15] वह माँ से कहता है –"बीरसा मत कहो माँ। मैं भगवान हूँ। मैं ही भगवान हूँ। मैं मुंडाओं के लड़कों को झुलाऊँगा नहीं। गोद में खिलाऊँगा नहीं। ३इन लोगों ने भगवान चाहा था माँ, मैं भगवान बनकर लौट आया हूँ।"[16] और बीरसा के भगवान होने की बात सेमल की रुई की तरह चारों ओर फैल जाती है। क्योंकि मुण्डाओं को विश्वास था कि एक दिन काले–काले मानुसों के घर में ही जनम लेगा उनका त्राता। एक दिन वह आयेगा। काले मानुस की गोद में अनार्य कृष्ण।

बीरसा के साथ सरदार आकर शामिल होते हैं क्योंकि मुंडाओं की बीरसा पर असीम आस्था है। बीरसा सोचता है कि वह सरदारों के हाथ का खिलौना नहीं, नेता बनेगा। वह इस बात का प्रचार करेगा कि जमींदार, महाजन, बनिया और सरकार मुंडाओं के दुश्मन हैं। धीरे–धीरे बीरसा का प्रभाव इतना बढ़ता है कि सरदार लोग बेकार – से हो जाते हैं। उसे विश्वास हो जाता है कि उसके एक बार हाँक लगाने से सभी मुंडा विद्रोह कर देंगे।

बीरसा के कारण मुंडा खेती नहीं करते, उधार नहीं लेते, लगान नहीं देते, सूद नहीं देते, जमीन बंधक बनाकर धान–गेहूँ उधार नहीं लेते, कुली का काम चाय–बागान में नहीं करते। परिणाम स्वरूप जमींदार, मिशन के साहब तथा सरकार घबराती है कि मुंडाओं के दिल में ऐसी हिम्मत किसने भर दी? बीरसा जंगलवासियों के मन में एक आत्मविश्वास भर देता है। वह सोचता है कि इसके लिए तो मुझे मुंडाओं (जंगली, असभ्य) से ज्यादा मुंडा बनना पड़ेगा। इस प्रकार बीरसा, मुंडाओं को भड़काता है, आंदोलन करवाता है। एक प्रकार से तो यह असहयोग आंदोलन ही था। सभी को विश्वास हो जाता है कि यह भगवान न होता तो उसकी पुकार पर सारे मुंडा एक न हो जाते। वह लोगों से कहता है कि "जो मुझे पूजेगा वह आज से बीरसाइत कहलायेगा। हमारी लड़ाई सभी के साथ है। हमारी लड़ाई का नाम होगा– उलगुलान।"[17] वह मुंडाओं को नौकरी से दूर रहने को कहता है। वह लोगों से कहता है कि अब हमारा समय आ गया है। सुगाना भी बीरसा को साथ देता है। मुंडा जागने लगते हैं। वह मुंडाओं के जीवन से अलौकिकता निकाल बाहर कर देता है। बीरसा स्त्रियों में भी आग भरता है। बीरसाइतों की पहली सभा डोम्बारी पहाड़ी के नीचे जागरी मुंडा के घर होती है। मानी पहाड़ी बीरसा के साथ काम करने को तैयार होती है। सुगाना को अफसोस है कि बीरसा का उलगुलान वह देख नहीं पायेगा।

बीरसा तो प्राचीन जड़ता, अंधे कुसंस्कारों से मुंडाओं को मुक्त कर आधुनिक युग में ले जाना चाहता है। किन्तु ऐसे आधुनिक काल में जहाँ पहुँचकर मुंडा लोग अपनी आदिम सरलता, न्यायबोध, साम्य की नीति को अटूट रख सकें– एक नये मानव–धर्म में आश्रय पा सकें। इसलिए वह भगवान बनकर धर्म में, आस्था में क्रान्ति लाना प्रारंभ करता है। इसलिए तो वह भगवान बना था। इसलिए तो वह मनुष्य को, बीरसा को, जो अच्छा लगता था, उसे भुला देता है। वह मुंडाओं को लेकर सशस्त्र संग्राम के पथ पर उतरता है। 24 दिसम्बर, 1899 के क्रिसमस के दिन वह मुंडाओं को अंग्रेजों के विरुद्ध खड़ा कर देता है। गरीब बीरसा विशाल, विराट, शक्तिशाली, प्रबल प्रशासनिक व्यवस्था को धोखा देता है। इस प्रकार बीरसा विद्रोह की शुरूआत करता है। सरकार को चिंता है कि अगर बीरसा जनसाधारण को अपनी ओर खींचने में समर्थ रहा तो वह व्यापक विद्रोह कर सकता है। बीरसा के आक्रमण बढ़ते जाते हैं। बीरसा को पता था कि एक न एक दिन वह भी पकड़ा जायेगा इसलिए वह परमी से कहता है– "उलगुलान सफल न होने से उलगुलान समाप्त नहीं होगा। मेरा मरण नहीं होगा। तू यह बात सबसे कह देना, साली।"[18] शशिभूषण राय और छः मुंडा, बीरसा को पाँच सौ रूपये के लिए पकड़वा देते हैं। तब अपने साथियों से बीरसा ने कहा था– "जब जिरह होगी तुम चारसौ मुंडा यही कहना कि तुम मुझे नहीं पहचानते। मैंने क्या कहा था तुम नहीं समझते थे। कुछ भी समझे बिना यह उलगुलान किया था।"[19] जेल से ही बीरसा ने मुंडाओं से कहा था– "सुनो ए मुंडा लोगों। मैं धरती का आबा हूँ, मिट्टी की रची यह देह छोड़े बिना तुम्हारा उद्धार नहीं है। हिम्मत मत छोड़ो, यह मत कहना कि भगवान हमें जेहल में ठूँसकर चले

गये। सारे हथियार तुम्हें दिये थे, कलेजे में साहस दिया था, पहचनवा दिया था कि कौन तुम्हारे दुश्मन हैं। हथियार मत छोड़ देना, एक दिन तुम ही जीतोगे।"[20] और बीरसा को जहर देकर मार दिया जाता है। अमूल्य बाबू से भी बीरसा ने कहा था– समझते नहीं, वह मुझे जिंदा निकलने नहीं देना चाहते।

नौ जून को बीरसा सबेरे नौ बजे मर गया था। उसे खाने में जहर देकर मारा गया था किन्तु कारण बताया गया था हैजा (कॉलेरा) होने का बीरसा की मृत्यु पर जेलर से एंडरसन बोले थे– "अभी लिखो, बीरसा मुंडा, सुगाना मुंडा का बेटा, जन्म–1875। उम्र पच्चीस बरस। डाईड ऑफ एशियाटिक कॉलेरा। तारीख–9 जून 1900।"[21]

हैजे के रोगी को तो उल्टी–दस्त आदि होते हैं किन्तु बीरसा को तो ऐसा कुछ भी नहीं हुआ था, तब आदिवासी सोचते हैं कि शायद भगवान को ऐसा नहीं होता होगा।"[22] मृत्यु के बाद भी भरमी, कनू, गोपी, रमई, गया, सुखराम और डोन्का ने बीरसा की शिनाक्त नहीं करके अपनी ईमानदारी निभायी थी। विद्रोह न हो इसलिए अंग्रेजों ने अंतिम संस्कार, एक भी बीरसाईत न देख सके, वैसे करवाने का आयोजन किया था। मुंडा लाश जलाते नहीं थे। बीरसा की लाश को जलाने से मुंडाओं को मालूम हो जायेगा कि बीरसा भगवान नहीं, मामूली आदमी है, किन्तु अंतिम संस्कार समाप्त होते–होते शिब्बन मेहतर पागल हो जाता है फिर भी उसके मुख से घोषणा निकलती है– "उलगुलान का अंत नहीं। भगवान का मरण नहीं हुआ रे। मुंडा लोगों, मैं देख आया। उलगुलान काकृ"[23] –सिद्ध कर देता है कि बीरसा भगवान की मृत्यु नहीं हो सकती।

तीसरी फरवरी को बीरसा पकड़ा गया था–भात राँधा था, धुआँ उठ रहा था अतः पकड़ा गया। जिसके लिए दो जिलों की पुलिस और सेना भाग–दौड़ कर रही थी। किसी मुंडा ने ही बीरसा को पकडवाया था। डिप्टी कमिश्नर ऐंडरसन ने उसे पाँच सौ रूपये दिये थे। बीरसा उलगुलान में सब कुछ जलाना चाहता था। उसने तो जंगल का अधिकार चाहा था। दिकू लोगों से वह जंगल छीन लेना चाहता था क्योंकि उन्होंने मुंडा जीवन पर जबरदस्ती अधिकार जमा लिया था। जमीन, जंगल, पहाड़ एवम् जन्म से मिली मुंडारी दुनिया से मुंडा उखाड़े जा रहे थे।

जब वह जेल में था और जंजीर की आवाज नहीं आती थी तब धानी मुंडा आदि अन्य कैदी कहते–"जंजीर घसीटो भगवान, हाय रे, जंजीर की आवाज सुनकर तो हम जिंदा हैं रै।"[24] मरने से पहले बीरसा ने कहा था– "जंगल में राख उड़ा देने से जंगल को पता चलेगा कि बीरसा उसे भूला नहीं। राख धरती पर गिरेगी, धरती पर पेड़ उगेंगे। वही पेड़ बड़े होंगे, साथी। उलगुलान का अंत नहीं है। भगवान का मरण नहीं होता।"[25] धानी ने सुनारा से कहा था –भगवान ने मुझसे कहा था कि अन्य रूपों में तुम मुझे पहचान न पाओगे इसलिए मैं मानुस होकर लौट आऊँगा–मैं मुंडा बनकर आऊंगा रे। बीरसा ने कहा था– मैं 400 मुंडाओं को जेल से बचाऊँगा। मृत्यु से पहले उसने भरमी से कहा था– "मैं लोट आऊँगा रे भरमी। बुन्दू, तमार, तमाम जगहों में होली की आग जलाऊँगा। सोनपुर में धूल की आँधी उड़ाऊँगा। पता लगेगा–बानो के पहाड़ पर रेशम के कीड़ों ने अंडे दिये हैं। उन अंड़ों से जैसे बहुत–से कीड़े निकलते हैं, मेरी बातों से नयी बातें निकलेंगी।"[26]

बीरसा मर कर भी मुंडा में चेतना और अधिकार–बोध भरकर उन्हें अन्याय के विरुद्ध संघर्ष करना सिखा जाता हैं। इसलिए तो साली कहती है –"भगवान सिखा गये हैं कि उलगुलान का अंत नहीं है। भगवान का मरण नहीं हुआ। मुंडा के जीवन में कष्ट का अंत होना ही तो भगवान को मरण होना है।"[27] "संघर्ष कभी समाप्त नहीं होता, इसका अंत हो ही नहीं सकता। पराजय से संघर्ष का अंत नहीं होता। वह बना रह जाता है, क्योंकि मानुस रह जाता है, हम रह जाते हैं।"[28]

'जंगल के दावेदार' का नायक बीरसा मुंडा अंग्रेजों तथा उनके सहायक जमींदार आदि के विरोध में, नये शोषण के विरुद्ध तथा अनेक अधिकारों की माँग करते हुए 25 साल की आयु में अपने प्राण न्योछावर कर देता है। इस प्रकार यह बीरसा मात्र किसी शरीर में बँधा प्राण नहीं है, बल्कि जन–जन में बसी वह क्रांति है, विचारधारा है, जिसे कोई नहीं मार सकता। बीरसा आज भी जिंदा है, हर उस आदिवासी में या फिर उस व्यक्ति में जो अन्याय के विरुद्ध खड़ा है। यही कारण है कि बीरसा मुंडा की रहस्यमयी मृत्यु के करीब एक दशक पश्चात् दक्षिण बस्तर में बड़े पैमाने पर "भूमकाल" नाम से आदिवासी विद्रोह हुआ था। जिसका नायक था–गुंडाधुर। इसने संपूर्ण बस्तर को आंदोलित किया था। बस्तर के आदिवासियों में अपनी अस्मिता के बीज अंकुरित किये थे– तभी जल, जंगल, जमीन और स्थानीय के सवाल फूटे थे। छतीसगढ में बीरसा की विरासत को शंकरगृहा नियोगी ने आगे बढ़ाई है किन्तु नियोगी का अंत भी गोली मार कर किया गया था। डॉ. कुमार सुरेशसिंह और महाश्वेता देवी की पुस्तकों की तुलना करते हुए श्री रामशरण जोशी का यह मत उचित ही है कि "दोनों लेखकों ने बीरसा को हाशिए पर से उठाकर झारखंड की अस्मिता के रूप में स्थापित कर दिया है। आज बीरसा मुंडा झारखंड की सीमाओं को लाँघ चुका है। बिहार, झारखंड, उड़ीसा, छत्तीसगढ़ और मध्यप्रदेश के पूर्वी–दक्षिण क्षेत्र के आदिवासी उसे अपने नायक के रूप में देखते हैं।"[29]

निष्कर्षः इस प्रकार बीरसा, मुण्डा आदिवासियों का भगवान है। वह आदिवासियों के अधिकारों के लिए अंग्रेजों से संघर्ष करता है और मरकर भी दूसरे बीरसा पैदा करता है। गरीबी, अभाव, अत्याचार और शोषण भी उसकी संघर्ष यात्रा को रोक नहीं पाते। संथालों की संघर्ष–कथा का बीरसा नायक है। बीरसा मात्र किसी शरीर में बँधा प्राण नहीं है, बल्कि जन–जन में बसी वह क्रांति है, विचारधारा है, जिसे कोई नहीं मार सकता। बीरसा आज भी जिंदा है, हर उस आदिवासी में या फिर उस व्यक्ति में जो अन्याय के विरुद्ध खड़ा है।

संदर्भ सूची

1. Krittivas Mukherjee, Indo-Asian News Service, Artical-I don't write for awards: Mahasweta Devi, Sunday December 14, 2003
2. देवी, महाश्वेता, जंगल के दावेदार, राधाकृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली, 2008, पृ. 84
3. वही. पृ. 38
4. वही. पृ. 39
5. वही. पृ. 42
6. वही. पृ. 43
7. वही पृ..63
8. वही पृ..64
9. वही पृ..68
10. वही. पृ. 69
11. वही. पृ. 81
12. वही. पृ. 82
13. वही. पृ. 83
14. वही. पृ. 87
15. वही. पृ. 88
16. वही. पृ. 90
17. वही. पृ. 148
18. वही. पृ. 237
19. वही. पृ. 243
20. वही. पृ. 245
21. वही.पृ.248
22. वही.पृ. 23

23. वही,पृ. 28
24. वही. पृ. 23
25. वही. पृ. 24
26. वही. पृ. 26
27. वही. पृ. 279
28. वही. पृ. 280
29. जोशी, रामशरण, दस्तक, अंक—13—15,पृ.280